IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय का महिलाओं एवं किशोरों के प्रति सक्रियता एवं संवेदनशीलता का विश्लेषण

प्रो. गोपाल प्रसाद[1], कु. सरिता [2]

[1]आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर
[2]शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

सारांश (Abstract):

यह शोध पत्र भारतीय सर्वोच्च न्यायालय की महिलाओं और किशोरों के अधिकारों के संरक्षण और संवर्धन के प्रति सक्रियता (Judicial Activism) और संवेदनशीलता (Sensitivity) की भूमिका का गहन विश्लेषण करता है। यह अध्ययन इस बात पर प्रकाश डालता है कि कैसे न्यायपालिका ने न्यायिक हस्तक्षेप, ऐतिहासिक फैसलों और लिंग-संवेदनशील न्यायशास्त्र (gender-sensitive jurisprudence) के माध्यम से इन कमजोर वर्गों के लिए न्याय की पहुँच सुनिश्चित की है। भारत का संविधान लिंग समानता (Gender Equality) और भेदभाव के निषेध की गारंटी देता है। हालांकि, सामाजिक-कानूनी परिदृश्य में व्याप्त विषमताओं और विधायी खामियों के कारण महिलाओं और किशोरों को अक्सर अपने अधिकारों से वंचित होना पड़ता है। इन परिस्थितियों में, सर्वोच्च न्यायालय ने एक सक्रिय संस्था के रूप में कार्य किया है, जिसने विधायी सीमाओं से परे जाकर, सामाजिक न्याय के सिद्धांतों के आधार पर मौलिक अधिकारों की व्याख्या और विस्तार किया है। यह शोध, मुख्य रूप से, न्यायिक सक्रियता के सकारात्मक प्रभाव और न्यायिक संवेदनशीलता के महत्व को दर्शाता है। विशाखा बनाम राजस्थान राज्य (Vishaka v. State of Rajasthan) मामले में, न्यायालय ने कार्यस्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए विस्तृत दिशा-निर्देश जारी किए, जो बाद में कानून का आधार बने। भरण-पोषण अधिकार (Maintenance Rights): न्यायालय ने भरण-पोषण कानूनों की उदार व्याख्या करके महिलाओं के वित्तीय अधिकारों को सशक्त किया है, खासकर वैवाहिक विवादों के मामलों में, इस प्रकार कानूनी प्रावधानों में अंतराल को भरा है। घरेलू हिंसा से महिलाओं के संरक्षण अधिनियम (Protection of Women from Domestic Violence Act) के क्रियान्वयन में न्यायालय ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जिससे महिलाओं को तत्काल राहत और सुरक्षा मिल सके। समानता और गरिमा, संपत्ति के अधिकार, विवाह-विच्छेद, और सेना में समान अवसर जैसे मामलों में, न्यायालय ने समय-समय पर लैंगिक पूर्वाग्रहों को चुनौती दी है और महिलाओं की गरिमा के अधिकार को बरकरार रखा है।

मुख्य शब्द (Keywords): न्यायपालिका, सामाजिक न्याय, किशोर न्याय, संविधान, समानता, मानवाधिकार, महिला अधिकार, विधि का शासन न्यायिक संवेदनशीलता, लैंगिक न्याय, जनहित याचिका, घरेलू हिंसा, लैंगिक समानता ।

परिचय (Introduction):

भारत का संविधान, एक संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक गणराज्य की स्थापना करता है, जिसका मूल उद्देश्य अपने सभी नागरिकों के लिए न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व सुनिश्चित करना है। इस संवैधानिक दर्शन के संरक्षक के रूप में, भारतीय सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court of India) ने अपनी स्थापना के बाद से एक महत्वपूर्ण और बहुआयामी भूमिका निभाई है। अपनी पारंपरिक न्यायिक भूमिका से आगे बढ़ते हुए, इसने न्यायिक सक्रियता (Judicial Activism) के माध्यम से एक रचनात्मक और प्रगतिशील बल के रूप में कार्य किया है, विशेष रूप से समाज के सबसे कमजोर और हाशिए पर पड़े वर्गों महिलाओं और किशोरों के अधिकारों की रक्षा और संवर्द्धन के संदर्भ में। भारत में, महिलाओं और किशोरों को ऐतिहासिक, सामाजिक और आर्थिक कारणों से संरचनात्मक असमानताओं और असुरक्षाओं का सामना करना पड़ता है। पितृसत्तात्मक मानदंड, गरीबी, जागरूकता की कमी और कानूनी ढाँचे के अपर्याप्त कार्यान्वयन ने उनके मौलिक अधिकारों के प्रभावी उपभोग में बाधा उत्पन्न की है। इस पृष्ठभूमि में, सर्वोच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 32 और 226 के तहत अपनी शक्तियों, और जनहित याचिका (Public Interest Litigation - PIL) की अवधारणा का उपयोग करते हुए, निष्क्रिय विधायिका और कार्यपालिका की जवाबदेही तय की है। न्यायालय ने न केवल मौजूदा कानूनों की व्याख्या की है, बल्कि कई ऐतिहासिक निर्णयों के माध्यम से स्वयं कानून का निर्माण भी किया है, जिससे सामाजिक न्याय की दिशा में एक नया मार्ग प्रशस्त हुआ है। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा महिलाओं और किशोरों के प्रति अपनाई गई इसी न्यायिक सक्रियता (Judicial Activism) और न्यायिक संवेदनशीलता (Judicial Sensitivity) का गहन विश्लेषण करने का प्रस्ताव करता है। यह शोध इस बात की पड़ताल करेगा कि न्यायालय ने अपने निर्णयों के माध्यम से उनके अधिकारों को किस हद तक पुनः परिभाषित, संरक्षित और विस्तारित किया है, और इन न्यायिक हस्तक्षेपों का जमीनी स्तर पर क्या प्रभाव पड़ा है।

भारत का संविधान **अनुच्छेद 14 (समानता), 15 (भेदभाव का निषेध), 21 (जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार)** जैसे मौलिक अधिकारों के माध्यम से महिलाओं और बच्चों के अधिकारों को सुनिश्चित करता है। न्यायालय का कार्य यह सुनिश्चित करना है कि ये अधिकार केवल कागज़ों तक सीमित न रहें, बल्कि वास्तविक जीवन में प्रभावी हों। इस शोध से यह पता चलेगा कि न्यायालय ने इस संवैधानिक दायित्व को कितनी सक्षमता से निभाया है। सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों, जैसे कि विशाखा दिशानिर्देश (Vishaka Guidelines) या बच्चों के सर्वोत्तम हित (Best Interest of the Child) के सिद्धांत, ने सीधे तौर पर सामाजिक मानदंडों और व्यवहारों को प्रभावित किया है। इन न्यायिक हस्तक्षेपों का विश्लेषण सामाजिक परिवर्तन लाने में न्यायपालिका की भूमिका को समझने के लिए महत्वपूर्ण है।

न्यायिक सुधारों की आवश्यकता: जहाँ न्यायालय ने महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं, वहीं कभी-कभी उसकी संवेदनशीलता पर भी सवाल उठे हैं (जैसे कि कुछ मामलों में समझौते पर जोर देना, न्यायिक पूर्वाग्रह आदि)। यह शोध उन क्षेत्रों को उजागर करने में मदद करेगा जहाँ न्यायपालिका को अपनी प्रक्रिया और दृष्टिकोण में और अधिक सुधार करने की आवश्यकता है, जैसे कि न्यायपालिका में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ाना।

नीति निर्माण: न्यायिक सक्रियता के माध्यम से निर्धारित सिद्धांतों ने अक्सर नए विधायी सुधारों का आधार तैयार किया है। इस अध्ययन के निष्कर्ष नीति निर्माताओं और कानून प्रवर्तन एजेंसियों के लिए महिलाओं और किशोरों से संबंधित कानूनों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए आवश्यक अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकते हैं।

शोध का उद्देश्य :

1. न्यायिक सक्रियता का मूल्यांकन – सर्वोच्च न्यायालय द्वारा महिलाओं और किशोरों से संबंधित मामलों में अपनाई गई न्यायिक सक्रियता (Judicial Activism) की प्रकृति, सीमा और प्रभाव का गहराई से विश्लेषण करना।

उन प्रमुख ऐतिहासिक फैसलों (landmark judgments) और निर्देशों की पहचान करना जिन्होंने महिलाओं के संवैधानिक अधिकारों (जैसे अनुच्छेद 14, 15, 21) और किशोरों के कल्याण को बढ़ावा दिया है, जैसे विशाखा दिशानिर्देश (कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न) या किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम के क्रियान्वयन से संबंधित मामले।

2. संवेदनशीलता के मापदंडों की जाँच – न्यायालय के फैसलों और टिप्पणियों में निहित लैंगिक संवेदनशीलता (Gender Sensitivity) और बाल-अनुकूल दृष्टिकोण (Child-Friendly Approach) के विभिन्न आयामों का आकलन करना।

यह पता लगाना कि न्यायपालिका ने कैसे कानूनी व्याख्याओं और प्रक्रियाओं को बदलकर पीड़ितों के प्रति अधिक सहानुभूतिपूर्ण और न्यायसंगत वातावरण बनाया है, विशेष रूप से यौन अपराधों से जुड़े मामलों में (जैसे पोक्सो अधिनियम के तहत)।

3. कानूनी सुधारों पर प्रभाव का अध्ययन – सर्वोच्च न्यायालय के फैसलों ने मौजूदा कानूनों (statutes) और सरकारी नीतियों में किन महत्वपूर्ण बदलावों को उत्प्रेरित किया है। उदाहरण के लिए, घरेलू हिंसा अधिनियम या दंड संहिता संशोधन (निर्भया एक्ट) जैसे महत्वपूर्ण कानूनी सुधारों में न्यायालय के योगदान को रेखांकित करना।

4. चुनौतियों और अंतराल की पहचान – न्यायालय के प्रगतिशील फैसलों के क्रियान्वयन (implementation) में आने वाली व्यावहारिक चुनौतियों और प्रणालीगत अंतरालों (systemic gaps) का पता लगाना। यह मूल्यांकन करना कि जमीनी स्तर पर (निचली अदालतों, पुलिस, बाल कल्याण समितियों में) संवेदनशीलता के वांछित स्तर को प्राप्त करने में क्या बाधाएं हैं।

5. भविष्य के लिए सुझाव – अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर, महिलाओं और किशोरों के लिए न्याय वितरण प्रणाली को अधिक प्रभावी, त्वरित और संवेदनशील बनाने हेतु सुधारवादी सुझावों (reformatory suggestions) को प्रस्तुत करना।

साहित्य समीक्षा :

1. भारतीय सर्वोच्च न्यायालय और महिला न्यायशास्त्र (Women's Jurisprudence): मौलिक अधिकारों (अनुच्छेद 14, 15, 21) के तहत लैंगिक समानता और सम्मान का अधिकार।
2. कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न (Sexual Harassment at Workplace) और विशाखा बनाम राजस्थान राज्य मामले में दिए गए दिशानिर्देश।
3. घरेलू हिंसा से संबंधित मामलों में संवेदनशीलता (जैसे घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005)।
4. यौन अपराधों में न्यायशास्त्र का विकास (जैसे धारा 375, 354, 354-D, 498A) न्यायपालिका में महिला प्रतिनिधित्व का मुद्दा और इसकी संवेदनशीलता पर प्रभाव।

प्रमुख कानूनी संदर्भ/अधिनियम:

1. विशाखा और अन्य बनाम राजस्थान राज्य (1997)
2. अपराध कानून (संशोधन) अधिनियम, 2013
3. घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005
4. राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) की वार्षिक रिपोर्ट (तुलनात्मक अध्ययन के लिए)।

पुस्तकें/शोध पत्र

1. **"Constitutional Law of India"** (M.P. Jain या V.N. Shukla द्वारा) – मौलिक अधिकारों पर सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों का खंड।
2. **"Criminal Law: Cases and Materials"** यौन अपराधों और घरेलू हिंसा पर न्यायिक व्याख्या।
3. **महिलाओं के अधिकार और भारतीय संविधान पर विधि आयोग (Law Commission) की रिपोर्टें।**
4. विभिन्न **कानूनी पत्रिकाओं (जैसे Indian Law Review, Journal of the Indian Law Institute)** में प्रकाशित **"महिलाओं के प्रति न्यायिक संवेदनशीलता"** पर शोध लेख
5. किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015
6. यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण (POCSO) अधिनियम, 2012
7. यूनिसेफ (UNICEF) और बाल अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन (UN Convention on the Rights of the Child) पर आधारित न्यायिक व्याख्याएँ।

अनुसंधान पद्धति :

यह शोध पद्धति मुख्य रूप से गुणात्मक (Qualitative) और विश्लेषणात्मक (Analytical) प्रकृति की होगी, जो कानूनी दस्तावेजों और सैद्धांतिक साहित्य के गहन अध्ययन पर केंद्रित है। गुणात्मक (Qualitative) और वर्णनात्मक (Descriptive): इस शोध में सर्वोच्च न्यायालय के फैसलों, टिप्पणियों और सक्रियता को गहराई से समझने पर ध्यान केंद्रित किया गया है, न कि केवल संख्यात्मक डेटा पर। इसका उद्देश्य न्यायालय की संवेदनशीलता के स्वरूप का वर्णन और विश्लेषण करना है। ऐतिहासिक–कानूनी (Historical-Legal): समय के साथ सर्वोच्च न्यायालय के फैसलों में आए बदलावों और प्रमुख ऐतिहासिक फैसलों का अध्ययन किया जाएगा, जो महिलाओं और किशोरों के अधिकारों के लिए मील का पत्थर साबित हुए हैं।

प्राथमिक स्रोत (Primary Sources):

1. सर्वोच्च न्यायालय के प्रमुख फैसले (Judgments of Supreme Court): वे मामले जो सीधे महिलाओं (जैसे – यौन उत्पीड़न, विवाह, संपत्ति अधिकार, गर्भपात) और किशोरों (जैसे – किशोर न्याय, बाल श्रम, POCSO) से संबंधित हैं।
2. न्यायिक टिप्पणियाँ (Judicial Observations/Remarks): न्यायालय द्वारा सुनवाई के दौरान की गई आधिकारिक टिप्पणियाँ, जो उसकी संवेदनशीलता को दर्शाती हैं (जैसे – हाल ही में 'महिलाओं को स्वतंत्र छोड़ दें' वाली टिप्पणी)।
3. जनहित याचिकाएँ (Public Interest Litigations - PILs): महिलाओं और किशोरों से संबंधित मामलों में न्यायालय द्वारा स्वतः संज्ञान (Suo Motu) या पीआईएल के माध्यम से की गई पहल।

द्वितीयक स्रोत (Secondary Sources):

1. कानूनी पत्रिकाएँ और लेख (Law Journals and Articles): इस विषय पर प्रकाशित शोध लेख, कानूनी विश्लेषण और कमेंट्री।
2. सरकारी रिपोर्टें (Government Reports): राष्ट्रीय महिला आयोग (NCW), राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC), और महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की प्रासंगिक रिपोर्टें।
3. पुस्तकें (Books): भारतीय न्यायपालिका और सामाजिक न्याय पर केंद्रित अकादमिक पुस्तकें।
4. मीडिया कवरेज (Media Coverage): प्रमुख समाचार पत्रों और विश्वसनीय ऑनलाइन पोर्टलों में न्यायिक सक्रियता पर गहन रिपोर्टें।

निष्कर्ष :

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court of India) ने महिलाओं और किशोरों के अधिकारों की सुरक्षा और संवर्धन में एक अग्रणी और सक्रिय भूमिका निभाई है, जो मात्र कानूनी व्याख्या तक सीमित न रहकर सामाजिक परिवर्तन की दिशा में एक सशक्त कदम है। न्यायालय ने अपनी संवैधानिक शक्तियों (अनुच्छेद 14, 15, 21, 32, 226) का उपयोग करते हुए, कई ऐतिहासिक निर्णय दिए हैं जिन्होंने इन कमजोर वर्गों के जीवन को मौलिक रूप से प्रभावित किया है। न्यायालय ने कई मामलों में 'न्यायिक सक्रियता' (Judicial Activism) का परिचय दिया है। लिंग आधारित न्याय (Gender Justice) के क्षेत्र में, निर्णय जैसे विशाखा बनाम राजस्थान राज्य (कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की रोकथाम के लिए दिशा-निर्देश), श्रीमती सरला मुद्गल बनाम भारत संघ (बहुविवाह पर), और शायरा बानो बनाम भारत संघ (तीन तलाक की असंवैधानिकता) ने महिलाओं के गरिमापूर्ण जीवन, समानता और सुरक्षा के अधिकार को सुदृढ़ किया है। इन निर्णयों ने न केवल मौजूदा कानूनों की व्याख्या की, बल्कि कानून बनाने के लिए दिशा-निर्देश भी प्रदान किए, जहाँ विधायिका निष्क्रिय थी।

किशोर न्याय के संबंध में, न्यायालय की संवेदनशीलता किशोरों के 'सर्वोत्तम हित' (Best Interest of the Child) के सिद्धांत पर केंद्रित रही है। सम्पत्ति बनाम आंध्र प्रदेश राज्य जैसे मामलों में, न्यायालय ने किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम की भावना को बनाए रखने पर जोर दिया। इसका उद्देश्य किशोर अपराधियों को दंड देने के बजाय उनका पुनर्वास सुनिश्चित करना है, यह पहचानते हुए कि वे भी समाज के पीड़ित हो सकते हैं जिन्हें सुधार की आवश्यकता है।सामाजिक-कानूनी संवेदनशीलता सर्वोच्च न्यायालय ने पारंपरिक कानूनी दृष्टिकोण से हटकर, सामाजिक-आर्थिक वास्तविकताओं और संरचनात्मक असमानताओं (Structural Inequalities) को अपने निर्णयों का आधार बनाया है। उदाहरण के लिए महिलाओं के संपत्ति अधिकार और विरासत, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 2005 में बेटियों को समान सहदायिकी अधिकार (Coparcenary Rights) देने वाले संशोधन की पुष्टि करके, न्यायालय ने महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता सुनिश्चित की।

सशस्त्र बलों में महिला अधिकारी: महिला अधिकारियों को स्थायी कमीशन (Permanent Commission) प्रदान करने के निर्णय ने लिंग रूढ़िवादिता (Gender Stereotypes) को चुनौती दी और समान अवसर के सिद्धांत को बढ़ावा दिया।

पोक्सो (POCSO) अधिनियम का कार्यान्वयन न्यायालय ने बाल यौन शोषण के मामलों में न्याय की गति, पीड़ित-केंद्रित दृष्टिकोण और मनोवैज्ञानिक समर्थन की आवश्यकता पर जोर दिया है, जो 'बच्चे को द्वितीयक आघात' (Secondary Victimization of the Child) से बचाने की संवेदनशीलता को दर्शाता है।

न्यायालय की सक्रियता सराहनीय है, लेकिन चुनौतियाँ अभी भी बनी हुई हैं। निर्णयों का प्रभावी क्रियान्वयन, कानूनी जागरूकता की कमी, और सामाजिक पूर्वाग्रह (Social Prejudice) अभी भी न्याय तक पहुँच में बाधाएँ उत्पन्न करते हैं। न्यायालय के फैसलों में निरंतरता और स्पष्टता बनाए रखना आवश्यक है ताकि निचली अदालतें उन्हें प्रभावी ढंग से लागू कर सकें। भविष्य में, सर्वोच्च न्यायालय को इन वर्गों के लिए न्यायिक शिक्षा और संवेदीकरण (Judicial Education and Sensitization) पर अधिक ध्यान केंद्रित करना होगा ताकि न्यायालय के निर्णय केवल कागज पर नहीं, बल्कि समाज के हर स्तर पर न्याय और समानता ला सकें। इस प्रकार, भारतीय सर्वोच्च न्यायालय ने न केवल एक कानूनी संस्था के रूप में, बल्कि एक सामाजिक चेतना के संरक्षक के रूप में भी अपनी भूमिका को सफलतापूर्वक निभाया है, जो समावेशी और न्यायसंगत समाज की दिशा में निरंतर प्रयासरत है।

संदर्भ सूची

1. Datt, R., & Sundharam, K. P. M. (2022). Indian economy (65th ed.). S. Chand Publishing. (गरीबी और सामाजिक न्याय पर न्यायिक प्रभाव)
2. Kothari, R. (1988). State against democracy: In search of humane governance. Ajanta Publications.
3. Kashyap, S. C. (2012). हमारा संविधान और संवैधानिक विधि
4. Tripathi, P. (2018). मानवाधिकार और भारतीय संविधान

5. Pylee, M. V. (2003). *Constitutional government in India* (5th ed.). S. Chand & Company.
6. Basu, D.D. (2021). Introduction to the Constitution of India. LexisNexis.
7. Baxi, U. (2014). The future of human rights. Oxford University Press.
8. Dhavan, R. (1992). The Supreme Court of India: A socio-legal critique of its juristic techniques. Tripathi.
9. Haqqi, S. A. H. (Ed.). (2000). Supreme Court and judicial activism in India. New Century Publications.
10. Ahuja, R. (2018). Indian social system. Rawat Publications
11. Agarwal, H. O. (2006). International law and human rights. Central Law Agency. (
12. Diwan, P., & Diwan, P. (2020). Law of marriage and divorce (5th ed.). Universal Law Publishing.
13. Kaur, R. (2019). Women and the Indian legal system. Sage Publications.
14. Menon, N. (2012). Seeing like a feminist. Zubaan Books
15. Sharma, K. (2017). Status of women in India: A socio-legal study. Gyan Publishing House.
16. Singh, V. (2021). Feminist jurisprudence: A critical analysis of Indian judiciary. Oxford University Press.
17. Bhagwati, P.N. (1985). "Judicial Activism and Social Justice." Journal of the Indian Law
18. Bhattacharya, S. (2015). Juvenile justice system in India: A socio-legal perspective. Serials Publications.
19. Choudhry, S., Khosla, M., & Mehta, P. B. (Eds.). (2016). The Oxford handbook of the Indian constitution. Oxford University Press
20. Kumar, N. (2020). Juvenile justice and child protection in India. Central Law Publications.
21. Sharma, B. B. L., & Kumar, R. (2018). Child rights and juvenile justice in India. Manohar Publishers.
22. Singh, R. K. (2016). Children and the law in India. LexisNexis.